।। ओ३म्।।

वानप्रस्था गुलाबी देवी आर्या दिव्य स्मृति ग्रन्थमाला –

भाग-३

जीवन का अन्तिम लक्ष्य मोक्ष

लेखक :

स्वामी ऋतस्पति परिव्राजक

(मुख्याधिष्ठाता–गुरुकुल होशंगाबाद, नर्मदापुरम्, म.प्र.)

संयोजक :

वानप्रस्थ सत्यनारायण आर्य

सुजानगढ़, कोलकाता, रायपुर, सिलीगुड़ी

(कुलपति-गुरुकुल हरिपुर, उड़ीसा)

सम्पादक :

आचार्य राहुलदेव शास्त्री व्याकरणाचार्य

(आर्य समाज बड़ाबाजार, कोलकाता)

इस पुस्तिका का विमोचन आचार्य सुखदेव जी 'आर्य तपस्वी', रोहिणी, नई दिल्ली के कर-कमलों द्वारा आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय, नर्मदापुरम्, होशंगाबाद के शताब्दी समारोह के शुभ अवसर पर कार्तिक शुक्ल दशमी वि. सं. २०६८ तदनुसार ५ नवम्बर २०११ को गुरुकुल के पवित्र स्थली में सम्पन्न हुआ।

सम्पादकीय

मनुष्य जीवन का चरम (अन्तिम) लक्ष्य मोक्ष प्राप्त करना है। 'मोक्ष' शब्द में ही घुटने की बात कही है। जिससे सम्पूर्ण दुःखों से छूटकर पूर्णानन्द को प्राप्त करना ही मोक्ष (मुक्ति) है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या, द्वेष ये हमारे आन्तरिक शत्रु हैं। इन शत्रुओं से प्रताड़ित होकर व्यक्ति दुःखी होता है, किन्तु अहिंसा, सत्य, प्रेम, दया, परोपकार, धर्म ये हमारे सहयोगी हैं। इनसे सहयोग प्राप्त करते हुए मनुष्य अपने अन्तिम लक्ष्य की ओर शीघ्र एवं सहजता से अग्रसर होता है। ईश्वर को प्राप्त करने के लिए उससे मिलने के लिए उसके द्वारा निर्दिष्ट मार्गों का अवलम्बन करना पड़ेगा। सच-झूठ, स्तुति-निन्दा, दया-हिंसा, परोपकार-अपकार, ज्ञान-अज्ञान, धर्म-अधर्म, ईमानदारी-बेईमानी, सदाचार-दुराचार, अच्छाई-बुराई, श्रद्धा-आस्था, विश्वास-अपघात इनमें से प्रथम ईश्वर को प्राप्त करने के सोपान हैं। इन गुणों को अपनाकर ही व्यक्ति ईश्वर को प्राप्त करता है। ईश्वर सर्वगुण सम्पन्न है। किन्तु इन गुणों को त्यागकर सुबह केवल मन्दिर जाने अथवा भगवान का नाम रटने मात्र से मुक्ति नहीं होगी। यह केवल पाखण्ड कहलायेगा। क्योंकि ईश्वर भी कर्म करने का आदेश देता है, निष्कर्मण्यता प्रभु भक्ति नहीं है। पुरुषार्थ करते हुए वास्तविक ज्ञान प्राप्त करना ही परम पुरुषार्थ है। किन्तु मनुष्य आज ईश्वर को संकट में काम आने वाला यंत्र मात्र समझता है। जब विपत्ति आए तो याद करना, सम्पत्ति में भूल जाना। वस्तुतः ईश्वर की प्रतिदिन उपासना करनी चाहिए। उपासना से उसका आचरण, व्यवहार सुधर कर वह मुक्तिमार्ग का पथिक बन जाता है। फिर स्वयं परमात्मा भी उसकी सहायता करेगा।

'जीवन का अन्तिम लक्ष्य मोक्ष' इस लघु पुस्तिका में आर्य जगत् के कर्मठ पुरुष, गुरुकुलीय परम्परा के संवाहक, आदर्श व्यक्तित्व, आर्यश्रेष्ठ स्वामी ऋतस्पति परिव्राजकजी ने इस पर गहन विचार प्रस्तुत किए हैं। आपने पूज्य आचार्य बलदेवजी से नैष्ठिक दीक्षा लेकर 'आचार्य जगद्देवजी नैष्ठिक' के नाम से प्रसिद्ध हो अपने जीवन को समाज के लिए अर्पित कर दिया। फिर चैत्र सुदी षष्ठी संवत् २०६२ को दर्शनयोग महाविद्यालय रोजड़, गुजरात में पूज्य स्वामी सत्यपतिजी परिव्राजक जी से सन्यास लेकर स्वामी ऋतस्पतिजी परिव्राजक बने। आपके आचार्यत्व में गुरुकुल होशंगाबाद अपने शतवर्ष

पूर्णकर विशाल शताब्दी समारोह मनाने जा रहा है। आपका जीवन अनुकरणीय है। आप धुन के धनी हैं। जो कार्य करने की सोचते हैं उसे पूर्ण करके ही दम लेते हैं। दम्भ, अभिमान, अहंकार आपसे कोसो दूर है। आप मिलनसार एवं विनम्र व्यक्तित्व के धनी हैं। आपके परिचय एवं कार्यों को इतने थोड़े शब्दों में वर्णन करना सम्भव नहीं है। आपके आचार्यत्व काल में गुरुकुल होशंगाबाद इतिहास रचने की दहलीज पर खड़ा है। यह हम सब आर्यजनों के लिए परम सौभाग्य का विषय है। वि. सं १९६८ में लगा यह छोटा सा वृक्ष आज वि. सं. २०६८ में अपने पूर्ण यौवन को प्राप्त कर आज इस धरा को शीतल छाया फलमूल प्रदान कर रहा है।

प्रातः स्मरणीय वेदोद्धारक महर्षि दयानन्द सरस्वतीजी से प्रेरित होकर अमर बलिदानी स्वामी श्रद्धानन्द ने कांगड़ी में जिस गुरुकुलीय परम्परा की नींव रखी थी, उसी परम्परा के इस वृक्ष को आज शतवर्ष पूर्ण होता देखकर कदाचित मुक्तात्माएँ प्रसन्नता का अनुभव कर रही होंगी। मध्य भारत एवं विदर्भ क्षेत्र में आर्ष पाठविधि के इस केन्द्र ने अपने माध्यम से अनेक महत्वपूर्ण कार्य किए हैं एवं वर्तमान समय में भी करा रहा है। इस पुण्यावसर पर गुरुकुल होशंगाबाद के संरक्षक, कुलपिता, आदर्श पुरुष, दानवीर, प्रखर समाजसेवी, महात्मा वानप्रस्थ सत्यनारायण जी आर्य ने इस ऐतिहासिक दिवस पर वेद प्रचारार्थ अपनी धर्मपत्नी की पुण्य स्मृति पर वानप्रस्था गुलाबी देवी आर्या दिव्य स्मृति ग्रन्थमाला ट्रेक्ट की एक लम्बी श्रृंखला प्रकाशित करवाई है। आपकी यह अनेक वर्षों से योजना थी, किन्तु गुरुकुल होशंगाबाद का शताब्दी समारोह इससे और क्या पवित्र दिवस हो सकता था? अतः आपने इस कार्य के सम्पादन हेतु मुझसे निवेदन किया। मुझे भी यह कार्य अभूतपूर्व लगा। शताब्दी समारोह पर एक साथ १२ ट्रेक्ट छपवाना व निर्धन लोगों के ५५० परिवारों में प्रति परिवार ३० किलो चावल बांटने का कार्य भी निःसंदेह अपने आप में अद्वितीय है।

अन्त में इस महायज्ञ में परोक्ष-प्रत्यक्ष रूप से अपना सहयोग, आशीर्वाद परामर्श प्रदान करने वाले सभी महानुभावों का मैं हृदय से धन्यवाद एवं यथायोग्य आभार व्यक्त करता हूँ।

विदुषामनुचर :

आचार्य राहुलदेव शास्त्री

(आर्य समाज बड़ाबाजार, कोलकाता)

जीवन का अन्तिम लक्ष्य मोक्ष

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव।

हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्ता समग्र ऐश्वर्य युक्त शुद्ध स्वरूप सब सुखों के दाता परमेश्वर आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन और दु:खों को दूर कर दीजिये और जो कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं, वह सब हमको प्राप्त कराइये।

संसार का प्रत्येक मनुष्य सदा सुख चाहता है। दु:ख कोई नहीं चाहता। मनुष्यों से भिन्न प्राणी गाय, बकरी, हाथी, घोड़े, कुत्ते, चिड़िया आदि भी दु:ख से बचने और सुख पाने का प्रयत्न करते रहते हैं। परन्तु देखने में यही आता है कि मनुष्य ही अधिक सुख पाने में सफल हो पाता है, क्योंकि मनुष्य अपनी बुद्धि से सुख के साधनों को इकट्ठा कर सकता है, कर लेता है।

लोगों से यदि पूछा जाये कि सबसे बड़ा सुख क्या हो सकता है, तो विचारशील व्यक्ति यह उत्तर देगा कि जो सदा स्वस्थ रहे, युवावस्था बनी रहे, शरीर की समस्त इन्द्रियाँ और अंग सुख भोगने और अपना-अपना कार्य करने में समर्थ बनी रहें। सब लोग उसकी आज्ञा का पालन करें, कोई विरोध न करे, उसका गुणगान करे, संसार के सबसे उत्तम-उत्तम पदार्थ उसको सदा उपलब्ध रहे, सब कुछ उसे ज्ञात रहे, कोई बात उससे छिपी न रहे। इच्छा होते ही बिना रुकावट सब जगह आ जा सके, वह सबका राजा हो और सदा जीवित रहे। सामान्यत: इससे बड़े सुख की बात नहीं कही जा सकती।

उपर्युक्त कथन पर विचार किया जाय तो निश्चय होगा कि इनमें से तीन लक्ष्य तो इस शरीर के रहते प्राप्त होना संभव है। १. सदा जीवित रहना, २. सब कुछ जान लेना, ३. इच्छा होते ही बिना रुकावट सब जगह पहुँच जाना। इन तीन लक्ष्यों को छोड़ भी देते हैं तो भी अन्य बहुत सी बातें हैं जिनको पूर्ण करना महा कठिन है।

भारत के वैदिक ऋषियों का विचार रहा है कि संसार के समस्त पदार्थ

सत्व-रज-तमोगुण से बने हैं। अतः आसक्ति पूर्वक इनके सेवन से पूर्ण शुद्ध सुख नहीं मिल सकता। इनमें आसक्ति रखने से सुख के साथ दुःख भी अवश्य भोगना पड़ेगा। यदि दुःख रहित पूर्ण सुख पाना है तो सुख स्वरूप आनन्दस्वरूप परमेश्वर का साक्षात्कार करना होगा। उसी के साथ ज्ञानपूर्वक सदा रहना होगा। क्योंकि परमेश्वर में आनन्द ही आनन्द है। उसमें लेशमात्र भी दुःख नहीं है, वह तो सच्चिदानन्द स्वरूप है।

परमेश्वर अजर अमर अविनाशी है। आत्माएँ भी कभी नहीं मरती केवल शरीरों का नाश होता रहता है। इसी प्रकार से सत्वगुण, रजोगुण, तमोगुण रुपी प्रकृति (परमाणु समूह) है उसका भी नाश कभी नहीं होता। सबके शरीर और सारा संसार इन्हीं परमाणुओं के मेल से बना हुआ है। मिले हुए परमाणु जब अलग-अलग हो जाते हैं तो इसी को नाश कह दिया जाता है। वास्तव में इनका अभाव कभी नहीं होता। ईश्वरीय न्याय व्यवस्था से आत्माओं को अपने कर्मानुसार भिन्न-भिन्न शरीरों में जाना होता है। हम सभी आत्माएँ इस शरीर से पहले भी वकिसी शरीर में थे और आगे भी हमारा जन्म किसी न किसी योनि में-शरीर में होगा। हाँ यदि इसी जन्म में परमेश्वर का साक्षात्कार कर लिया, जीवनमुक्त हो गए तो परान्तकाल तक दुःखों से छूट जाएँगे और आनन्द में रहेंगे। जीते जी इसी शरीर में समाधि अवस्था में परमेश्वर के आनन्द से आनन्दित रहना जीवन्मुक्ति कहलाती और शरीर छोड़ने के पश्चात् भी परमात्मा के आनन्द में रहना पूर्ण मुक्ति कहलाती है। मुक्ति और मोक्ष ये दोनों शब्द पर्यायवाची हैं, समान अर्थ वाले हैं। जैसा हम नहीं वैसा हमारे साथ होना और जैसा हम चाहते हैं वैसा न होना यही दुःख है, बन्धन है, परवशता है। मनुष्य अपनी बुद्धि के अनुसार, समझ के अनुसार दुःखों से बचने और सुख पाने के प्रयास में लगा रहता है। अपनी छोटी बुद्धि के कारण परिणामस्वरूप यही अनुभव करता है कि एक दुःख से छूटा तो कोई दूसरा दुःख बाधा बन्धन दिखाई देने लगता है।

अतः मनुष्य को परम दयालु, सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान आनन्ददाता परमेश्वर के बताए मार्ग पर चलना चाहिए। भगवान ने ही हमें यह मनुष्य का शरीर बना कर दिया है। भगवान ने ही पृथ्वी, जल, वायु, सूर्य, चन्द्र, तारे, वृक्ष,

वनस्पति व प्राणी जगत की रचना की है। उसी सर्वज्ञ ने वेद द्वारा सांसारिक सुख और मोक्षनन्द पाने का मार्ग दर्शन किया है। योगियों, ऋषि-महर्षियों ने योग द्वारा परमात्मा का साक्षात्कार करके सकके कल्याण के लिए अपने उपदेश और ग्रन्थ रचना के द्वारा परमेश्वर की प्राप्ति का उपाय बतलाया।

इस युग के महान योगी महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने अपने सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थों में बतलाया है कि सत्य ज्ञान, सत्य कर्म और उपासना से ही मनुष्य को समस्त दु:खों बन्धनों से मुक्ति मिल सकती है। ईश्वर का साक्षात्कार हो सकता है। मोक्ष पद प्राप्त हो सकता है। अन्यथा नहीं। इसलिए हमें अपने ज्ञान कर्म उपासना को पूर्ण शुद्ध कर लेना चाहिए। प्रश्न हो सकता है कि शुद्ध-शुद्ध किसका और कितना? इसी प्रकार शुद्ध कर्म किसको कहें और शुद्ध उपासना क्या कहलाएगी। इनका उत्तर इस प्रकार समझना चाहिए कि अपना अर्थात् आत्मा का ज्ञान, परमात्मा का ज्ञान और शरीर व संसार का उतना ज्ञान कि जितने का हम पर प्रभाव पड़ता रहता है, हम प्रभावित होते हैं, हम सुखी-दु:खी होते हैं। बौद्धिक रूप से या शाब्दिक रूप से हम मनुष्य कम से कम इतना जान लें कि हम शरीर नहीं हैं, आत्मा हैं। अविनाशी, निराकार सूक्ष्म, चेतन-तत्व हैं। इच्छा द्वेष प्रयत्न सुख-दु:ख ज्ञान हमारे गुण हैं।

भगवान हम सबके हैं। हम भी परमेश्वर का साक्षात्कार कर सकते हैं। इसी प्रकार परमेश्वर को जान लें, पक्का कर लें कि ईश्वर परम दयालु, न्यायकारी, कर्मफल दाता, सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान, सच्चिदानन्द स्वरूप, सर्वव्यापक, निराकार है। वही मोक्षानन्द दाता है। शरीर के बारे में इतना ज्ञान पक्का कर लें कि यह हमारा साधन है, नाशवान् है। इस शरीर से यथाशीघ्र अपने मुख्य लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति कर लेनी है। अब रही बात संसार की तो संसार तो अति विशाल है, उसका सूक्ष्म व पूर्ण ज्ञान हम शरीर में रहते हुए कभी नहीं कर सकते। किन्तु स्थूल रूप में कम से कम यह ज्ञान तो पक्का करना ही होगा कि संसार का प्रत्येक पदार्थ नहीं रहेगा। संसार का कोई भी पदार्थ सुखदायक नहीं है।

शुद्ध कर्म या सत्य कर्म उसे समझना चाहिए कि मनुष्य परोपकार का

कार्य तो करे, परन्तु उसके बदले में कोई सांसारिक सुख की इच्छा न रखें। इसी को निष्काम कर्म भी कहते हैं। जैसे भगवान सबका भला चाहता है और करता है, उसी प्रकार उसके उपासक को, चाहने वाले को भी सबका भला सोचना चाहिए और जितना बन सके उतना अपने तन-मन-वचन कर्म से भलाई का काम करना चाहिए।

अब उपासना के सम्बन्ध में जानने का क्रम है। उपासना शब्द में दो शब्द है–उप+आसना=उपासना। उप का अर्थ होता है समीप और आसना का अर्थ है होना। इसलिए ईश्वर की उपासना का अर्थ हुआ ईश्वर के समीप होना या हो जाना। इसमें प्रश्न उठता है कि जब ईश्वर सर्वव्यापक होने से सब आत्माओं के अन्दर-बाहर व्याप्त है, हमारे समीप है। हम परमेश्वर के समीप हैं तो फिर उपासना करने की क्या आवश्यकता है। क्या हम ईश्वर से दूर हैं। उसका उत्तर थोड़ा धैर्य से समझना होगा। क्योंकि दूरी तीन प्रकार की होती है। एक काल या समय से दूरी, दो–स्थान से दूरी और तीन–अशुद्ध ज्ञान या अज्ञान से दूरी। इन तीन प्रकार की दूरियों में से हम सब मनुष्य समय या स्थान ही दृष्टि से परमात्मा से दूर नहीं हैं। वब सब समय और सब स्थानों पर हमारे साथ है, किन्तु अज्ञआन के कारण अविद्या के कारण हम उससे दूर हैं। जैसे कि हमारे घर में ही कोई आवश्यक वस्तु रखी हो किन्तु उसका हमें ज्ञान न हो तो हम उससे लाभ नहीं उठा पाते। इसी प्रकार ईश्वर क्रो अपनी समीप प्रत्यक्ष रूप से न जानने के कारण हम उसके विशेष आनन्द, ज्ञान, निर्भयता से वंचित रहते हैं। ईश्वर को अपनी आत्मा से प्रत्यक्ष अनुभव करने को ही इस प्रसंग में शुद्ध उपासना या सच्ची उपासना समझनी चाहिए।

उपासना करने के लिए स्वस्थ निरोग शरीर होना पहली आवश्यकता है। शुद्ध सात्विक आहार का अन्तःकरण में पवित्र प्रभाव पड़ता है। अतः बल बुद्धि बढ़ाने वाले सात्विक अन्न-पान का संतुलित मात्रा में सेवन करना चाहिए। इसी प्रकार शुद्ध जल, शुद्ध वायु, चिन्ता मुक्त विचार, ब्रह्मचर्य, आसन, प्राणायाम, व्यायाम व शीरीरिक परिश्रम व औषधि से शरीर को स्वस्थ रखना चाहिए।

प्रातःकाल व सायंकाल कम से कम एक-एक घंटा एकांत शान्त वातावरण में आसन बिछाकर उस पर बैठकर अपना मन व आत्मा को परमात्मा के विचार में लगा देना चाहिए। मन में ईश्वर चिन्तन से भिन्न विचार उठने लगे तो बार-बार रोककर ईश्वर में लगाने लगें। भगवान के पवित्र नाम 'ओ३म्' का लम्बे स्वर में श्रद्धापूर्वक बार-बार उच्चारण करते जाए और इस ओ३म् नाम का अर्थ करें कि–हे परमेश्वर आप सबके रक्षक हैं। ज्ञान, बल आनन्द दाता हैं। हमारी रक्षा कीजिए। अशुभ विचारों से हमें बचाइए। हे ईश्वर हमें पवित्र ज्ञान, बल आनन्द दीजिए। इसी प्रकार गायत्री मंत्र का जप भी अर्थ सहित किया जा सकता है।

जैसे–**ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।** यह यजुर्वेद के ३६वें अध्याय का तीसरा मंत्र है। इस मंत्र का संक्षेप में अर्थ इस प्रकार कर सकते हैं–हे परम रक्षक, जीवनदाता, दुःखहर्त्ता, आनन्ददाता परमेश्वर आप ही जगत रचयिता हो, वरणीय हो, श्रेष्ठतम हो। आपका हम ध्यान करते हैं, आपको पाना चाहते हैं, आपकी अनुभूति करना चाहते हैं। आप हमें अपना ज्ञान, बल निर्भयता व आनन्द प्रदान करें। हमारी बुद्धि को सदैव सत्कर्म में प्रेरित करते रहें। इस प्रकार जप व उपासना व शुभ कर्म करने से निश्चित ही आत्मीय प्रगति होगी एवं अन्तिम लक्ष्य मोक्ष के मार्ग पर चल पड़ेंगे।

मोक्ष विषय बहुत महान् है। महर्षि दयानन्द सदृश महायोगी ने मोक्ष का सत्य मार्ग बतला दिया है। इस सूक्ष्म व परमोपयोगी विषय को सरलता व विस्तार से समझढने के लिए आपके आगे उनके आर्योद्देश्य रत्नमाला, सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, सत्यधर्म विचार व वेदभाष्य आदि ग्रंथों के मोक्ष संबंधी विचारों की विविध शीर्षकों में संकलित करके आप तक पहुँचा रहे हैं। ऋषिवर के हम सब कृतज्ञ हैं। संकलन में दयानन्द संदर्भ कोष से सहायता ली गई है। अतः कोषकार का हृदय से धन्यवाद करते हैं।

जीवन का अन्तिम लक्ष्य मोक्ष

(मोक्ष मुक्ति)

१. मुक्ति–अर्थात् जिससे सब बुरे कर्म और जन्ममरणादि दुःख सागर से छूटकर सुखरूप परमेश्वर को प्राप्त होके सुख में ही रहना है, वह 'मुक्ति' कहलाती है। (अ.उ.र.मा. २९)

२. 'मुक्ति' अर्थात् सब दुःखों से छूटकर बन्धरहित सर्वव्यापक ईश्वर और उसकी सृष्टि में स्वेच्छा से विचरना, नियत समय पर्यन्त मुक्ति के आनन्द को भोग के पुनः संसार में आना। (सत्यार्थ प्रकाश स्वमन्तव्यामन्तव्य १२)

मुक्ति का अधिकारी

प्रश्न–मुक्ति किसको प्राप्त होती है?

उत्तर–जो बद्ध है।

प्रश्न–बद्ध कौन है?

उत्तर–जो अधर्म अज्ञान में फंसा हुआ जीव है।

प्रश्न–बन्ध और मोक्ष स्वभाव से होता है या निमित्त से?

उत्तर–निमित्त से। क्योंकि जो स्वभाव से होता तो बन्ध और मुक्ति की निवृत्ति कभी नहीं होती। (स.प्र.न.समु.)

उसी पूर्ण पुरुष परमेश्वर के ज्ञान से मुक्ति

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।
तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।। यजु. ३१.१८

(वेदाहमेतम्)

प्रश्न–किस पदार्थ को जान के मनुष्य ज्ञानी होता है?

उत्तर–उस पूर्वोक्त लक्षण सहित परमेश्वर ही को यथावत् जीन के ठीक-ठीक ज्ञानी होता है, अन्यथा नहीं। जो सबसे बड़ा, सबका प्रकाश करने वाला और विद्या अन्धकार अर्थात् अज्ञान आदि दोषों से अलग है, उसी पुरुष को मैं परमेश्वर और इष्टदेव जानता हूँ। उसको जाने बिना कोई मनुष्य यथावत् ज्ञानवान् नहीं हो सकता। क्योंकि (तमेव विदित्वा.) उसी परमात्मा को जान के और प्राप्त होके जन्म-मरण आदि क्लेशों के समुद्र समान दुःख से छूट के परमानन्दस्वरूप मोक्ष को प्राप्त होता है, अन्यथा किसी प्रकार से मोक्ष सुख नहीं हो सकता। (ऋ.भा.भू., सृष्टिविद्याविषयः)

ज्ञान और मोक्ष प्रदाता परमेश्वर को नमन

यो देवेभ्य आतपति यो देवानां पुरोहितः।

पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मये।। (यजु. ३१.२०)

(यो देवेभ्य) जो परमात्मा विद्वानों के लिए सदा प्रकाशस्वरूप है, अर्थात् उनके आत्माओं को प्रकाश में करप देता है और वही उनका पुरोहित अर्थात् अत्यन्त सुखों से धारण और पोषण करने वाला है, इससे वे फिर दुःख सागर में कभी नहीं गिरते। (पूर्वो यो देवेभ्य जातो.) जो सब विद्वानों से आदि विद्वान औ जो विद्वानों के ही ज्ञान से प्रसिद्ध अर्थात् प्रत्यक्ष होता हो और जो विद्वानों से वेदविद्यादि को यथावत् पढ़के धर्मात्मा अर्थात् ब्रह्म को पिता के समान मान के, सत्यभाव से प्रेम-प्रीति करके सेवा करने वाला जो विद्वान मनुष्य है, उसको भी हमलोग नमस्कार करते हैं।

(ऋ.भा.भू. (सृष्टिविद्याविषयः)

मुक्ति सुख में वैदिक प्रमाण

स न बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।

यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त।। (यजु. ३२/१०)

(स नो बन्धुः) सब मनुष्यों को यह जानना चाहिए कि वही परमेश्वर हमारा बन्धु अर्थात् दुःख का नाश करने वाला (जनिता.) सब सुखों का उत्पन्न और पालन करने वाला है तथा वही सब कामों को पूर्ण करता है और सब लोकों को जानने वाला है कि जिसमें देव अर्थात् विद्वान लोग मोक्ष को प्राप्त होके सदा आनन्द में रहते हैं और वे तीसरे धाम अर्थात् शुद्ध सत्त्व से सहित होके सर्वोत्तम सुख में सदा स्वच्छन्दता से रमण करते हैं।।२।।

(ऋ.भा.भू. (मुक्तिविषयः)

मुक्ति के साधन

१. ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना का करना, धर्म का आचरण और पुण्य का करना, सत्संग विश्वास तीर्थ सेवन सत्पुरुषों का संग और परोपकारादि स,ब अच्छे कामों का करना तथा सब दुष्ट कर्मों से अलग रहना है, ये सब 'मुक्ति के साधन' कहाते हैं। (आर्योद्देश्य रत्नमाला ३०)

२. 'मुक्ति के साधन' ईश्वरोपासना अर्थात् योगाभ्यास, धर्मानुष्ठान, ब्रह्मचर्य से विद्यापति, आप्त विद्वान का संग, सत्यविद्या, सुविचार और पुरुषार्थ आदि हैं। (स. प्र. स्वमन्त. प्र. १३)

३. मुक्ति के मिलने के साधन ये हैं :-

१. सत्य का आचरण।

२. सत्यविद्या अर्थात् ईश्वरकृत वेदविद्या को यथावत् पढ़कर ही ज्ञान की उन्नति

और सत्य का पालन यथावत् करना।
३. सत्पुरुष ज्ञानियों का संग करना।
४. योगाभ्यास करके अपने मन, इन्द्रियों और आत्मा को असत्य से हटाकर सत्य में स्थिर करना और ज्ञान को बढ़ाना।
५. परमेश्वर की स्तुति करना अर्थात् उसके गुणों की कथा सुनना और विचारना। (सत्य धर्म विचार)

प्रश्न–मुक्ति के क्या-क्या साधन हैं?

उत्तर–कुछ साधन तो प्रथम लिख आये हैं, परन्तु विशेष उपाय ये हैं–जो मुक्ति चाहे तो वह 'जीवनमुक्त' अर्थात् जिन मिथ्याभाषणादि पाप कर्मों का फल दुःख है। उनको छोड़ सुखस्वरूप फल को देने वाले सत्यभाषणादि धर्माचरण अवश्य करें। जो कोई दुःख को छुड़ाना और सुख को प्राप्त होना चाहे, वह अधर्म को छोड़ धर्म अवश्य करे। क्योंकि दुःख का पापाचरण और सुख का धर्माचरण मूल कारण है।

(प्रथम साधन) सत्पुरुषों के संग से 'विवेक' अर्थात् सत्याऽसत्य, धर्माऽधर्म, कर्त्तव्याऽकर्त्तव्य का निश्चय करें, पृथक्-पृथक् जाने और 'शरीर' अर्थात् जीव पंचकाशों का विवेचन करें। एक **'अन्नमय'** जो त्वचा से लेकर अस्थिपर्यन्त का समुदाय पृथ्वीमय है। दूसरा **'प्राणमय'** जिसमें 'प्राण' अर्थात् जो भीतर से बाहर जाता, 'अपान' जो बाहर से भीतर आता, 'समान' जो नाभिस्थ होकर सर्वत्र शरीर में रस पहुँचाता, **'उदान'** जिससे कण्ठस्थ अन्न-पान खैंचा जाता है और बल-पराक्रम होता है, 'व्यान' जिससे सब शरीर में चेष्टा आदि कर्म जीव करता है। तीसरा **'मनोमय'** जिसमें मन के साथ अहंकार वाक् पाद, पाणि, पायु और उपस्थ पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं। चौथा **'विज्ञानमय'** जिसमें बुद्धि चित्त, श्रोत्र, त्वचा, नेत्र, जिव्हा और नासिका ये पांच इन्द्रियाँ, जिससे जीव ज्ञानिदि व्यवहार करता है। पांचवां **'आनन्दमयकोश'** जिसमें प्रीति-प्रसन्नता, न्यून आनन्द, अधिकानन्द आनन्द और आधार कारण रूप प्रकृति है। ये 'पांच कोष' कहाते हैं। इन्हीं से जीव सब प्रकार के कर्म, उपासना और ज्ञानादि व्यवहारों को करता है। तीन अवस्था–एक 'जागृत' दूसरी 'स्वप्न' और तीसरी 'सुषुप्ति' अवस्था कहाती है। तीन शरीर है-एक 'स्थूल', जो यह दिखता है। दूसरा पांच प्राण, पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच सूक्ष्मभूत और मन तथा बुद्धि इन सत्तरह तत्वों का समुदाय 'सूक्ष्म शरीर' कहाता है। यह सूक्ष्म शरीर जन्ममरणादि में भी जीव के साथ रहता है। इसके दो भेद हैं–एक

'भौतिक' अर्थात् जो सूक्ष्म-भूतों के अंशों से बना है। दूसरा 'स्वाभाविक' जो जीव के स्वाभाविक गुण रूप है। यह दूसरा 'अभौतिक' शरीर मुक्ति में भी रहता है। इसी से जीव मुक्ति में भी सुख भोगता है। तीसरा कारण–जिसमें 'सुषुप्ति' अर्थात् गाढ़ निद्रा होती है। वह प्रकृतिरूप होने से सर्वत्र विभु और सब जीवों के लिए एक है। चौथा 'तुरीय' शरीर वह कहाता है–जिसमें समाधि से परमात्मा के आनन्दस्वरूप में मग्न जीव होते हैं। इसी समाधि संस्कारजन्य शुद्ध शरीर का पराक्रम मुक्ति में भी यथावत् सहायक रहता है। इन सब कोष, अवस्थाओं से जीव पृथक है, क्योंकि यह सबको विदित है कि अवस्थाओं से जीव पृथक् है। क्योंमकि जब मृत्यु होता है तब सब कोई कहते हैं कि जीव निकल गया। यह जीव सबका प्रेरक, सबका धर्ता, साक्षी, कर्ता, भोक्ता कहाता है। जो कोई ऐसा कहे कि जीव कर्ता-भोक्ता नहीं तो उसको जानो कि वह अज्ञानी, अविवेकी है। क्योंकि बिना जीव के जोये सब जड़ पदार्थ हैं, इनको सुख-दुःख का भोग व पाप-पुण्य-कर्तव्य कभी नहीं हो सकता। हाँ, इनके सम्बन्धझ में जीव पाप-पुण्यों का कर्ता और सुख-दुःखों का भोक्ता है। जब इन्द्रियाँ अर्थों में, मन इन्द्रियों और आत्मा मन के साथ संयुक्त होकर प्राणों को प्रेरणा करके अच्छे व बुरे कर्मों में लगाता है, तभी वह बहिर्मुख हो जाता है। उसी समय (बुरे कर्मों में) भीतर से आनन्द, उत्साह, निर्भयता और बुरे कर्मों में भय, शंका, लज्जा उत्पन्न होती है। वह अन्तर्यामी परमात्मा कि शिक्षा है। जो कोई इस शिक्षा के अनुकूल वर्त्तता है, वही मुक्तिजन्य सुखों को प्राप्त होता है और जो विपरीत वर्त्तता है, वह बन्धजन्य दुःख को भोगता है।

दूसरा साधन–'वैराग्य' अर्थात् जो विवेक से सत्या सत्य को जाना हो, उसमें से सत्याचरण का ग्रहण और असत्याचरण का त्याग करना विवेक (वैराग्य) है। जो पृथ्वी से लेकर परमेश्वर-पर्यन्त पदार्थों के गुण, कर्म, स्वभाव को जानकर उसकी आज्ञा पालन और उपासना में तत्पर होना, उससे विरूद्ध न चलना, सृष्टि से उपकार लेना विवेक (वैराग्य) कहाता है।

तत्पश्चात् तीसरा साधन–'**षट्क सम्पत्ति**' अर्थात् छः प्रकार के कर्म करना। एक–'**शम**' जिससे अपने आत्मा और अन्तःकरण को अधर्माचरण से हटा कर धर्माचरण से सदा प्रवृत्त रखना। दूसरा–'**दम**' जिससे श्रोत्रादि इन्द्रियों और शरीर को व्यभिचारादि बुरे कर्मों से हटाकर जितेन्द्रियत्वादि शुभ कर्मों में प्रवृत्त रखना। तीसरा–'**उपरति**' जिससे दुष्ट कर्म करने वाले पुरुषों से सदा दूर रहना। चौथा–'**तितिक्षा**' चाहे निन्दा, स्तुति, हानि, लाभ कितना

ही क्यों न हो, परन्तु हर्ष-शोक को छोड़ मुक्तिसाधनों में सदा लगे रहना। पांचवां–'**श्रद्धा**' जो वेदादि सत्य शास्त्र और इनके बोध से पूर्ण आप्त विद्वान सत्योपदेष्टा महाशयों के वचनों पर विश्वास करना। छठा–'**समाधान**' चित्त की एकाग्रता, ये छः मिलकर एक साधन तीसरा कहाता है।

चौथा--'**मुमुत्व**' अर्थात् जैसे क्षुधा तृषातुर को सिवाय अन्न-जल के दूसरा कुछ भी अच्छा नहीं लगता, वैसे बिना मुक्ति के साधन और मुक्ति के दूसरे में प्रीति न होना, ये चार साधन और चार '**अनुबन्ध**' अर्थात् साधनों के पश्चात् ये कर्म करने होते हैं। इनमें से पहला जो इन चार साधनों से युक्त पुरुष होता है, वही मोक्ष का अधिकारी होता है। दूसरा–'**सम्बन्ध**' ब्रह्म की प्राप्ति रूप मुक्ति प्रतिपाद्य और वेदादि-शास्त्र प्रतिपादक को यथावत समझकर अन्वित करना। तीसरा–'**विषयी**' सब शास्त्रों का प्रतिपादन-विषय ब्रह्म उसकी प्राप्ति रूप विषय वाले पुरुष का नाम विषयी है। चौथा–'**प्रयोजन**' सब दुःखों की निवृत्ति और परमानन्द को प्राप्त होकर मुक्ति-सुख का होना, ये चार अनुबन्ध कहाता है।

तदनन्तर '**श्रवणचतुष्ट्य**' एक 'श्रवण' जब कोई विद्वान उपदेश करे तब शान्त ध्यान देकर सुनना, विशेष ब्रह्मविद्या के सुनने में अत्यन्त ध्यान देना चाहिए कि यह सब विद्याओं में सूक्ष्म विद्या है। सुनकर दूसरा–'**मनन**' एकान्त देश में बैठके सुन हुए का विचार करना, जिस बात में शंका हो, पुनः पूछना और सुनना के समय भी वक्ता और श्रोता उचित समझें तो पूछना और समाधान करना। तीसरा–'**निदिध्यासन**' जब सुनने और मनन करने से निःसंदेह हो जाये, तब समाधिस्थ होकर उस बात को देखना–समझना कि यह जैसा सुना था, विचारा था, वैसा ही है या नहीं, ध्यान योग से देखना। चौथा--'**साक्षात्कार**' अर्थात् जैसा पदार्थ का स्वरूप, गुण और स्वभाव हो, वैसा यथातथ्य जान लेना–'**श्रवणचतुष्टय**' कहाता है।

सदा तमोगुण अर्थात् क्रोध, मलिनता, आलस्य, प्रमाद आदि रजोगुण अर्थात् ईर्ष्या, द्वेष, काम, अभिमान, विक्षेप आदि दोषों से अलग होके सत्व अर्थात् शान्त प्रकृति, पवित्रता, विद्या, विचार आदि गुणों को धारण करें। (मैत्री) सुखी जनों में मित्रता, (करुणा) दुःखी जनों पर दया, (मुदिता) पुण्यात्माओं से हर्षित होना, (उपेक्षा) दुष्टात्माओं में न प्रीति और न वैर करना।

नित्य प्रति न्यून से न्यून दो घण्टा-पर्यन्त मुमुक्ष ध्यान अवश्य करें,

जिससे भीतर के मन आदि पदार्थ साक्षात् हों। देखो! अपने चेतनस्वरूप है, इसी से ज्ञानस्वरूप और मन के साक्षी हैं। क्योंकि जब मन शान्त, चंचल, आनन्दित या विषादयुक्त होता है, उसको यथावत् देखते हैं, वैसे ही इन्द्रियाँ-प्राण आदि की ज्ञाता, पूर्वदृष्ट का स्मरणकर्ता और एक काल में अनेक पदार्थों के वेत्ता, धारणाकर्षणकर्ता और सबसे पृथक् हैं। जो पृथक न होते तो स्वतन्त्र, कर्ता, इनका प्रेरक, अधिष्ठाता कभी नहीं हो सकते।

मुक्ति और बन्ध के साधन/कारण

प्रश्न–मुक्ति और बन्ध किन-किन बातों से होता है?

उत्तर–परमेश्वर की आज्ञा पालन, अधर्म, अविद्या, कुसंग, कुसंस्कार, बुरे व्यसनों से अलग रहने और सत्यभाषण, परोपकार, विद्या, पक्षपात रहित न्याय-धर्म की वृद्धि करने, पूर्वोक्त प्रकार से परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना अर्थात् योगाभ्यास करने, विद्या पढ़ने-पढ़ाने और धर्म से पुरुषार्थ कर ज्ञान की उन्नति करने, सबसे उत्तम साधनों को रोकने और जो कुछ करे वह सब पक्षपात रहित न्याय-धर्मानुसार ही करे इत्यादि साधनों से मुक्ति और इनसे विपरीत ईश्वराज्ञाभंग करने आदि काम से 'बन्ध' होता है।

(स.प्र.न.समु.)

मुक्ति और पुनर्जन्म

प्रश्न–जीव मुक्ति को प्राप्त होकर पुनः जन्म-मरण रूप दुःख में कभी आते हैं या नहीं? क्योंकि–

न च पुनरावर्त्तते न च पुनरावर्त्तते इति।। (छान्दो ८/१५)

अनावृत्तिः शब्दादनावृत्तिः शब्दात्।। (वेदा. ४/४/२२)

यद् गत्वा न निवर्त्तन्ते तद्धाम परमं मम।। (भगवद्गीता १५/६)

इत्यादि वचनों से विचित होता है कि मुक्ति वही है कि जिससे निवृत्त होकर (जीव) पुनः संसासर में कभी नहीं आता।

उत्तर–यह बात ठीक नहीं। क्योंकि वेद में इस बात का निषेध किया है-

कस्य नूनं कतमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम।

को नो मह्या अदितये पुनर्दात् पितरं च दृशेयं मातरं च।। (ऋग्वेद)

प्रश्न–हमलोग किसका नाम पवित्र जानें? कौन नाशरहित पदार्थों के मध्य में वर्तमान देव सदा प्रकाशस्वरूप है, हमको मुक्ति का सुख भुगाकर पुनः इस संसार में जन्म देता और माता तथा पिता का दर्शन कराता है?।।१।।

अग्नेर्वयं प्रथमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम।

स नो मह्या अदितये पुनर्दात् पितरं च दशेयं मातरं च।।२।।

(ऋग्वेद १/२४/२)

उत्तर–हम इस स्वप्रकाशस्वरूप, अनादि सदामुक्त परमात्मा का नाम पवित्र जाने। जो हमको मुक्ति में आनन्द भोगाकर पृथ्वी में पुनः माता-पिता के सम्बन्ध में जन्म देकर माता-पिता का दर्शन कराता है। वही परमात्मा मुक्ति की व्यवस्था करता, सबका स्वामी है।।२।

मुक्ति के अनन्तर पुनर्जन्म

प्रश्न–सब संसार और ग्रन्थकारों का यही मत है कि जिससे जन्म-मरण में कभी न आवें?

उत्तर–यह बात कभी नहीं हो सकती। क्योंकि प्रथम तो जीव का सामर्थ्य, शरीरादि पदार्थ और साधन परिमित है, पुनः उसका फल अनन्त कैसे हो सकता है? अनन्त आनन्द को भोगने का असीम सामर्थ्य, कर्म और साधन जीवों में नहीं, इसलिए अनन्त सुख नहीं बोग सकते। जिसके साधन अनित्य है, उनका फल नित्य कभी नहीं हो सकता और जो मुक्ति में से लौटकर कोई जीव इस संसार में न आवे तो संसार का 'उच्छेद' अर्थात् जीव निशेष हो जाना चाहिए। (स.प्र.न.समु.)

प्रश्न–जितने जीव मुक्त होते हैं, उतने ईश्वर नये उत्पन्न करके संसार में रख देता है, इसलिए निशेष नहीं होते?

उत्तर–जो ऐसा होवे तो जीव अनित्य हो जायें। क्योंकि जिसकी उत्पत्ति होती है, उसका नाश अवश्य होता है। फिर तुम्हारे मतानुसार मुक्ति पाकर भी विनष्य हो जायेंगे। मुक्ति अनित्य हो जायेगी और मुक्ति के स्थान में बहुत सा भीड़-भड़क्का हो जायेगा। क्योंकि वहां आगम अधिक और व्यय कुछ भी नहीं होने से बढ़ती का पारावार न रहेगा और दुःख के अनुभव के बिना सुख कुछ भी नहीं हो सकता। जैसे कटु न हो तो मधुर क्या, जो मधुर न हो तो कटु क्या कहावे। क्योंकि एक स्वाद के एक रस के विरूद्ध होने से दोनों की परीक्षा होती है। जैसे कोई मनुष्य मीठा मधुर ही खाता-पीता जाये उसको वैसा सुख नहीं होता, जैसा सब प्रकार के रसों के भोगने वाले को होता है और जो ईश्वर अन्तवाले कर्मों का अनन्त फल देवे तो उसका न्याय नष्ट हो जाये। जो जितना भार उठा सके, उतना उस पर धरना बुद्धिमानों का काम है। जैसे एक मन भार उठनेवाले के सिर पर दस मन धरने से भार धरनेवाले की निन्दा होती है। वैसे अल्पज्ञ, अल्पसामर्थ्य वाले जीव पर अनन्त सुख का भार धरना ईश्वर के

लिये ठीक नहीं है और जो परमेश्वर नये जीव उत्पन्न करता है तो जिस कारण से उत्पन्न होते हैं वह चूक जायेगा। क्योंकि चाहे कितना ही बड़ा धनकोष हो, परन्तु उसमें व्यय है और आय नहीं, उसका कभी न कभी दिवाला निकल ही जाता है। इसलिए यही व्यवस्था ठीक है कि मुक्ति में जाना, वहाँ से पुनः आना ही अच्छा है। क्योंकि थोड़े से कारागार से 'जन्म कैद' या 'कालेपानी' अथवा 'फाँसी' को कई अच्छा मानता है। जब वहाँ से आना ही न हो तो जन्म-कारागार से इतना ही अन्तर है कि वहाँ मजूरी नहीं करनी पड़ती और ब्रह्म में लय होना समुद्र में डूब मरना है।

प्रश्न–जैसे परमेश्वर नित्यमुक्त पूर्ण सुखी है, वैसे ही जीव भी नित्य मुक्त और सुखी रहेगा तो कोई भी दोष न आयेगा?

उत्तर–परमेश्वर अनन्त स्वरूप, सामर्थ्य, गुण, कर्म, स्वभाववाला है, इसलिए वह कभी भी अविद्या और दुःख बन्धन में नहीं गिर सकता। जीव मुक्त होकर भी शुद्धस्वरूप अल्पज्ञ और परिमित गुण, कर्म, स्वभाववाला रहता है, परमेश्वर के सदृश कभी नहीं होता।

मुक्ति की अवधि अनन्त नहीं

प्रश्न–जब ऐसा तो मुक्ति भी जन्म मरण के सदृश है। इसके लिए श्रम करना व्यर्थ है?

उत्तर–मुक्ति जन्म मरण के सदृश नहीं। क्योंकि जब तक ३६००० बार उत्पत्ति और प्रलय का जितना समय होता है, उतने समय पर्यन्त जीवों को मुक्ति के आनन्द में रहना, दुःख का न होना क्या छोटी बात है? जब आज खाते-पीते हो, कल भूख लगनेवाली है, पुनः इसका उपाय क्यों करते हो? जब क्षुधा, तृषा, क्षुद्र, धन, राज्य, प्रतिष्ठा, स्त्री, संतान आदि के लिए उपाय करना आवश्यक है तो मुक्ति के लिए क्यों न करना? जैसे मरना अवश्य है तो भी जीवन का उपाय किया जाता है। वैसे ही मुक्ति से लौटकर जन्म में आना है तथापि उसका करना आवश्यक है।

(सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास)

मुक्ति की अवधि

प्रश्न–जो मुक्ति से भी जीव फिर आता है तो वह कितने समय तक मुक्ति में रहता है?

उत्तर–**ते ब्रह्मलोके ह परान्तकाले परामृतात् परिमुच्यन्ति सर्वे।।**

(मुण्डक ३/२/६)

यह मुण्डक उपनिषद् का वचन है। वे मुक्त जीव मुक्ति को प्राप्त होके ब्रह्म में आनन्द को तब तक भोग के पुनः महाकल्प के पश्चात् मुक्ति सुख को छोड़ के संसार में आते हैं।

इसकी संख्या यह है कि तैंतालीस लाख बीस सहस्त्र वर्षों की एक 'चतुर्युगी' दो सहस्त्र चतुर्युगियों का एक 'अहोरात्र' ऐसे तीस अहोरात्रों का एक महीना ऐसा बारह महीनों का एक वर्ष, ऐसे सात वर्षों का 'परान्तकाल' होता है। इसको गणित की रीति से यथावत समझ लीजिए। इतना समय मुक्ति में सुख भोगने का है। (सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास)

मुक्ति एक जन्म में अथवा अनेक जन्मों में

प्रश्न–मुक्ति एक जन्म में होती है या अनेक जन्मों में?

उत्तर–अनेक जन्मों में, क्योंकि–

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे पराऽवरे।। (मुण्डक २/२/८)

जब इस जीव के हृदय की अविद्या-अज्ञान रुपी गाँठ कट जाती है, तब संशय छिन्न होते और दुष्ट कर्म क्षय को प्राप्त होते हैं। तभी उस परमात्मा जो कि आत्मा के भीतर और बाहर व्याप रहा है, उसमें निवास करता है।

(सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास)

मुक्ति में जीव की स्थिति

प्रश्न–मुक्ति में जीव का लय होता है या विद्यमान रहाता है?

उत्तर–विद्यमान रहता है।

प्रश्न–कहाँ रहता है?

उत्तर–ब्रह्म में।

प्रश्न–ब्रह्म कहाँ है और वह मुक्त जीव एक ठिकाने रहता है या स्वेच्छाचारी होकर सर्वत्र विचरता है?

उत्तर–जो ब्रह्म सर्वत्र पूर्म है, उसी में मुक्त जीव 'अव्याहतगति' अर्थात् उसको कहीं रुकावट नहीं, विज्ञान आनन्दपूर्वक स्वतन्त्र विचरता है। (सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास)

प्रश्न–उसकी शक्ति कितने प्रकार की और कितनी है?

उत्तर–मुख्य एक प्रकार की शक्ति है, परन्तु बल, पराक्रम, आकर्षण, प्रेरणा, गति, भीषण, विवेचन, क्रिया, उत्साह, स्मरण, निश्चय, इच्छा, प्रेम, द्वेष, संयोग, विभाग, संयोजक, विभाजक, श्रवण, स्पर्शन, दर्शन, स्वादन

और गन्धग्रहण तथा ज्ञान इन चौबीस प्रकार के सामर्थ्ययुक्त जीव है। इससे मुक्ति में भी आनन्द की प्राप्ति और भोग करता है जो मुक्ति में जीव का लय होता तो मुक्ति का सुख कौन भोगता? और जो जीव के नाश ही को मुक्ति समझते हैं, वे तो महामूढ़ हैं। क्योंकि मुक्ति जीव की यह है कि दु:खों से छूटकर आनन्दस्वरूप, सर्वव्यापक, अनन्त परमेश्वर में जीव का आनन्द रहना।

(सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास)

वेदान्त दर्शन में मुक्ति का स्वरूप

द्वादशाहवभयविधं बादरायणोऽतः।। (वेदान्त ४/४/१२)

व्यासमुनि मुक्ति में भाव और अभाव इन दोनों को मानते हैं। अर्थात् शुद्धसामर्थ्ययुकर्त जीव मुक्ति में बना रहाता है। अपिवत्रता, पापाचरण, दु:ख, अज्ञानादि का अभाव मानते हैं। (सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास)

उपनिषद् में मुक्ति और जीव की स्थिति

यदा पञ्चावतिष्ठन्ते ज्ञानानि मनसा सह।

बुद्धिश्च न विचेष्टते तमाहुः परमां गतिम।। (कठोपनिषद् २/३/१०)

यह उपनिषद् का वचन है। जब शुद्ध मनयुक्त पाँच ज्ञानेन्द्रिय जीव के साथ रहती हैं और बुद्धि का निश्चय स्थिर होता है, उसको 'परमगति' अर्थात् मोक्ष कहते हैं। (सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास)

पूर्णमुक्त अवस्था में शरीर और इन्द्रियों के अभाव में जीवात्मा का व्यवहार

दैवेन चक्षुषा मनसैतान् कामान् पश्यन् रमते।। (छान्दो. ८/१२/५)

प्रश्न–जब मोक्ष में शरीर और इन्द्रियाँ नहीं रहती, तब वह जीवात्मा व्यवहार को कैसे जानता और देख सकता है?

उत्तर–वह जीव (दैवेन.) शुद्ध इन्द्रिय और शुद्ध मन से इन आनन्दस्वरूप कामों को देखता है और भोक्ता भय उसमें सदा रमण करता है। क्योंकि उसका मन और इन्द्रियाँ प्रकाशस्वरूप हो जाती हैं।

प्रश्न–वह मुक्त जीव सब सृष्टि में घूमता है अथवा कहीं एक ही ठिकाने पे बैठा रहता है?

उत्तर–जो मुक्त पुरुष होते हैं, वे ब्रह्मलोक अर्थात् परमेश्वर को प्राप्त होके और सबके आत्मा रूप परमेश्वर की उपासना करते हुए, उसी के आश्रय में रहते हैं। इसी कारण से उनका जाना आना सब लोक लोकान्तरों में होता है। उनके लिए कहीं रुकावट नहीं रहती और सब काम पूर्ण हो जाते हैं। कोई काम

अपूर्ण नहीं रहता। इसलिए जो मनुष्य पूर्वोक्त रीति से परमेश्वर को सबका आत्मा जान के उसकी उपासना करता है, वह अपनी सम्पूर्ण कामनाओं को प्राप्त होता है। यह बात प्रजापति परमेश्वर सब जीवों के लिए वेदों में बताता है। (ऋ.भा.भू.मुक्ति विषय)

मुक्ति में जीव और ईश्वर का पृथक् अस्तित्व

प्रश्न–मुक्ति में परमेश्वर में जीव मिल जाता है या पृथक् रहता है?

उत्तर–पृथक् रहता है, क्योंकि जो मिल जाये तो मुक्ति का सुख कौन भोगे और मुक्ति के जितने साधन हैं वे सब निष्फल हो जावें। वह मुक्ति तो नहीं, किन्तु जीव का प्लय जानना चाहिए। जब जीव परमेश्वर की आज्ञापालन, उत्तम कर्म, सत्संग योगाभ्यास पूर्वोक्त सब साधन करता है वही मुक्ति को पाता है।

सत्यं ज्ञानमन्नतं ब्रह्म यो वेद निहितं गुहायां परमे व्योमन्।
सोऽश्नुते सर्वान् कामान् सह ब्रह्मणा विपश्चितेति।।

(तैत्तिरीय. ब्रा.अनु.१)

जो जीवात्मा अपनी बुद्धि और आत्मा में स्थित सत्यज्ञान और अनन्त आनन्दस्वरूप परमात्मा को जानता है। वह उस व्यापकरूप ब्रह्म में स्थित होके उस विपचित् अनन्तविद्यायुक्त ब्रह्म के साथ सब कामों को प्राप्त होता है। अर्थात् जिस-जिस आनन्द की कामना करता है, उस-उस आनन्द को प्राप्त करता है। यही मुक्ति कहाती है। (सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास)

मुक्ति का आनन्द और स्थूल शरीर

प्रश्न–जसे शरीर के बिना सांसारिक सुख नहीं भोग सकता, वैसे मुक्ति के बिना शरीर आनन्द कैसे भोग सकेगा?

उत्तर–इसका समाधान पूर्व में कह आये हैं और इतना अधिक सुनो जैसे सांसारिक सुख शरीर के आधार से भोगता है। वह मुक्त जीव अनन्त व्यापक ब्रह्म में स्वच्छन्द घूमता, शुद्ध ज्ञान से सब सृष्टि को देखता, अन्य मुक्तों के साथ मिलता, सृष्टिविद्या को क्रम से देखता हुआ सब लोक लोकान्तरों में अर्थात् जितने ये लोक दिखते हैं और नहीं दिखते, उन सब में घूमता है। वह सब पदार्थों को जो कि उसके ज्ञान क आगे हैं–सबको देखता है। जितना ज्ञान अधिक होता है, उसको उतना ही आनन्द अधिक होता है। मुक्ति में जीवात्मा निर्मल होने से पूर्ण ज्ञानी होकर उसको सब सन्निहित पदार्थों का भान यथावत् होता है। यही सुख विशेष स्वर्ग और विषय तृष्णा में फंसकर दुःख विशेष भोग करना नरक कहाता है। '**स्वः**' सुख का नाम है। '**स्वः सुखं गच्छति**

यस्मिन् स स्वर्गः' अतो विपरीतो दुःखभोगो नरक इति' जो सांसारिक सुख है वह सामान्य स्वर्ग और जो परमेश्वर की प्राप्ति से आनन्द है वही विशेष स्वर्ग कहाता है। सब जीव स्वभाव से सुख प्राप्ति की इच्छा और दुःख का वियोग होना चाहते हैं, परन्तु जब तक धर्म नहीं करते और पाप नहीं छोड़ते, तब तक उनको सुख का मिलना और दुःख का छूटना न होना। क्योंकि जिसका कारण अर्थात् मूल होता है, वह नष्ट कभी नहीं होता। जैसे छिन्न मूले वृक्षो नश्यति तथा पापे क्षीण दुःख नश्यति। जैसे मूल कट जाने से वृक्ष नष्ट होता है, वैसे पाप को छोड़ने से दुःख नष्ट होता है।

(सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास)

क्या ईश्वर जीवों को बनाता है?

प्रश्न–जितने जीव मुक्त होते हैं, उतने ईश्वर नये उत्पन्न करके संसार में रख देता है, इसलिए निशेष नहीं होते।

उत्तर–जो ऐसा होवे तो जीव अनित्य हो जायें। क्योंकि जिसकी उत्पत्ति होती है, उसका नाश अवश्य होता है। फिर तुम्हारे मतानुसार मुक्ति पाकर भी विनष्ट हो जायेंगे। मुक्ति अनित्य हो गई और मुक्ति के स्थान में बहुत सा भीड़-भड़क्का हो जायेगा। क्योंकि वहाँ आगम अदिक और व्यय कुछ भी नहीं होने से बढ़ती का पारावार न रहेगा। और जो परमेश्वर नये जीव उत्पन्न करता है तो जिस कारण से उत्पन्न होते हैं, वह चूक जायेगा। क्योंकि चाहे कितना ही बड़ा धनकोष हो, परन्तु जिसमें व्यय है और आय नहीं, उसका कभी न कभी दिवाला निकल ही जाता है। इसलिए यही व्यवस्था ठीक है कि मुक्ति में जाना, वहाँ से पुनः आना ही अच्छा है।

प्रश्न–जैसे परमेश्वर नित्यामुक्त, पूर्ण-सुखी है, वैसे ही जीव भी नित्यमुक्त और सुखी रहेगा तो कोई भी दोष न आवेगा?

उत्तर–परमेश्वर अनन्तस्वरुप, सामर्थ्य, गुण, कर्म, स्वभाव वाला है, इसलिए वह कभी अविद्या और दुःख बन्धन में नहीं गिर सकता। जीव मुक्त होकर भी शुद्ध स्वरूप, अल्पज्ञ और परिमित गुण, कर्म, स्वभाव वाला रहता है, परमेश्वर के सदृश कभी नहीं होता।

प्रश्न–जब ऐसा तो मुक्ति भी 'जन्म-मरण' के सदृश है। इसके लिए श्रम करना व्यर्थ है?

उत्तर–मुक्ति जन्म-मरण के सदृश नहीं। क्योंकि जब तक ३६००० वार उत्पत्ति और प्रलय का जितना समय होता है, उतने समय पर्यन्त जीवों को

मुक्ति के आनन्द में रहना, दु:ख का न होना क्या छोटी बात है? जब आज खाते-पीते हो कल भूखने लगने वाली है, पुन इसका उपाय क्यों करते हो? जब क्षुधा, तृषा, क्षुद्र धन, राज्य, प्रतिष्ठा, स्त्री, संतान आदि के लिए उपाय करना आवश्यक है तो मुक्ति के लिए क्यों न करना? जैसे मरना अवश्य है तो भी जीवन का उपाय किया जाता है। वैसे ही मुक्ति से लौटकर जन्म में आना है तथापि उसका उपाय करना आवश्यक है। (सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास)

मुक्त जीव और स्थूल शरीर

प्रश्न–मुक्त जीव का स्थूल शरीर रहता है या नहीं?

उत्तर–नहीं रहता।

प्रश्न–फिर वह सुख और आनन्दभोग कैसे करता है?

उत्तर–उसके सत्य-संकल्पादि स्वाभाविक गुण-सामर्थ्य सब रहते हैं, भौतिक संग नहीं रहता। (सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास)

मुक्त जीव की शक्ति के प्रकार

प्रश्न–उसकी शक्ति कितने प्रकार की और कितनी है?

उत्तर–मुख्य एक प्रकार की शक्ति है, परन्तु बल, पराक्रम, आकर्षण, प्रेरणा, गति, भीषण, विवेचन, क्रिया, उत्साह, स्मरण, निश्चय, इच्छा, प्रेम, द्वेष, संयोग, विभाग, संयोजक, विभाजक, श्रवण, स्पर्शन, दर्शन, स्वादन और गन्धग्रहण तथा ज्ञान इन चौबीस प्रकार के सामर्थ्ययुक्त जीव है। इससे मुक्ति में भी आनन्द की प्राप्ति और भोग करता है जो मुक्ति में जीव का लय होता तो मुक्ति का सुख कौन भोगता? और जो जीव के नाश ही को मुक्ति समझते हैं, वे तो महामूढ़ हैं। क्योंकि मुक्ति जीव की यह है कि दु:खों से छूटकर आनन्दस्वरूप, सर्वव्यापक, अनन्त परमेश्वर में जीव का आनन्द रहना।

(सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास)

मुक्ति का स्वरूप

'मुक्ति' कहते हैं छूट जाने को अर्थात् जितने दु:ख है, उनसे छूटकर एक सच्चिदानन्द रूप परमेश्वर को प्राप्त होकर सदा आनन्द में रहना और फिर जन्म-मरण आदि दु:ख सागर में नहीं गिरना। इसी का नाम 'मुक्ति' है।

(सत्यधर्म विचार)

प्रश्न–मुक्ति किसको कहते हैं?

उत्तर–मुञ्चन्ति पृथग्भवन्ति जना यस्यां सा मुक्तिः जिसमें छूट जाना हो, उसका नाम मुक्ति है।

प्रश्न–किससे छूट जाना?

उत्तर–जिससे छूटने की इच्छा सब जीव करते हैं।

प्रश्न–किससे छूटने की इच्छा करते हैं?

उत्तर–जिससे छूटना चाहते हैं?

प्रश्न–किससे छूटना चाहते हैं?

उत्तर–दुःख से।

प्रश्न–छूटकर किसको प्राप्त होते और कहाँ रहते हैं?

उत्तर–सुख को प्राप्त होते और ब्रह्म में रहते हैं।

(सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास)

योगशास्त्र में अविद्यादि पंचक्लेश के नाश से मुक्ति

तदभावात्संयोगाभावो हानं तद्दृशेः कैवल्यम्। (योग. २८/२५)

(तदभावात्.) अर्थात् जब अविद्यादि क्लेश दूर होके विद्यादि शुभ गुण प्राप्त होते हैं, तब जीव सब बन्धनों और दुःखों से छूट के मुक्ति को प्राप्त हो जाता है।।८।।

तद्वैराग्यादपि दोषबीजक्षये कैवल्यम्। (योग. ३/५०)

(तद्वैराग्या.) अर्थात् शोकरहित आदि सिद्धि से भी विरक्त होके सब क्लेशों और दोषों का बीज जो अविद्या है, उनके नाश करने के लिए यथावत् प्रयत्न करें, क्योंकि उसे नाश के बिना मोक्ष कभी नहीं हो सकता।।९।।

सत्त्वपुरुषयोः शुद्धिसाम्ये कैवल्यमिति। (योग. ३/५५)

(सत्त्वपुरुष.) अर्थात् सत्त्व जो बुद्धि, पुरुष जो जीव, इन दोनों की शुद्धि से मुक्ति होती है, अन्यथा नहीं।

तदा विकेकनिम्नं कैवलप्राग्भारं चित्तम्। (योग ४/२६)

(तदा विवेक.) जब दोषों से अलग होके ज्ञान की ओर आत्मा झुकता है, तब कैवल्य मोक्ष धर्म के संस्कार से चित्त परिपूर्ण हो जाता है, तभी जीव को मोक्ष प्राप्त होता है। क्योंकि जब तक बन्धन के कामों में जीव फंसता जाता है, तब तक उसको मुक्ति प्राप्त होना असम्भव है। (ऋ.भा.भू. मुक्तिविषयः)

योगशास्त्र में मुक्ति का स्वरूप

पुरुषार्थ शून्यानां गुणानां प्रतिप्रसवः कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति।। (योग ४/३४)

कैवल्य मोक्ष का लक्षण यह है कि (पुरुषार्थ.) अर्थात् कारण के सत्त्व, रजो और तमोगुण और उनके सब कार्य पुरुषार्थ से नष्ट होकर, आत्मा में

विज्ञान और शुद्धि यथावत् होके, स्वरूपप्रतिष्ठा जैसा जीव का तत्व है, वैसा ही स्वाभआविक शक्ति और गुणों से युक्त होके, शुद्धस्वरूप परमेश्वर के स्वरूप विज्ञान प्रकार और नित्य आनन्द में जो रहना है, उसी को कैवल्य मोक्ष कहते हैं। (ऋ.भा.भू. मुक्तिविषयः)

उपनिषदों में मुक्ति का स्वरूप

यदा पंचावतिष्ठन्ते ज्ञानानि मनसा सह।

बुद्धिश्च न विचेष्टते तामाहुः परमां गतिम्। (कठोपनिषद् २/३/१०)

अब मुक्ति विषय में उपनिषद्कारों का जो मत है, सो भी आगे लिखते हैं कि–

(यदा पंचाव.) अर्थात् जब मन के सहित पांच ज्ञानेन्द्रिय परमेश्वर में स्थिर होके उसी से सदा रमण करती है और जब बुद्धि भी ज्ञान से विरुद्ध चेष्ठा नहीं करती उसी को परम गति अर्थात् मोक्ष कहते हैं।

प्रश्न–क्या वह मोक्षपद कहीं स्थानान्तर या पदार्थ विशेष है? क्या वह किसी एक ही जगह में है या सब जगह में?

उत्तर–नहीं, ब्रह्म जो सर्वत्र व्यापक हो रहा है, वही मोक्ष पद कहता है और मुक्त पुरुष उसी मोक्ष को प्राप्त होते हैं।

प्रश्न–जब मोक्ष में शरीर और इन्द्रियाँ नहीं रहती, तब वह जीवात्मा व्यवहार को कैसे जानता और देख सकता है?

उत्तर–(दैवेन.) वह जीव शुद्ध इन्द्रिय और शुद्ध मन से इन आनन्दस्वरूप कामों को देखता और भोगता हुआ उसमें सदा रमण करता है, क्योंकि उसका मन और इन्द्रियाँ प्रकाशस्वरूप हो जाती हैं।

मोक्ष की इच्छा सब जीवों को करनी चाहिए, जो कि आत्मा का भी अन्तर्यामी है, उसी को ब्रह्म कहते हैं और वही अमृत अर्थात् मोक्ष स्वरूप है। और वैसे उसका अन्तर्यामी कोई भी नहीं, किन्तु वह अपना अन्तर्यामी आप ही है। ऐसा प्रजानाथ परमेश्वर के व्याप्तिरूप सभा स्थान को मैं प्राप्त होऊँ। और इस संसार में जो पूर्ण विद्वान ब्राह्मण है, उनके बीच में कीर्ति को प्राप्त होऊँ। हे परमेश्वर! मैं कीर्तियों का भी कीर्तिरूप होके अपको प्राप्त हुआ चाहता हूँ। आप भी कृपा करके मुझको सदा अपने समीप रखिये।

(ऋ.भा.भू. मुक्तिविषयः)

।। ओ३म् ओ३म् करो बेड़ा पार है ।।

वानप्रस्था गुलाबी देवी आर्या के जीवनकाल में उनकी प्रेरणा से प्रकाशित साहित्य–

१. विश्वकल्याण निधि	२०५२-१९९५
२. विश्वकल्याण निधि (द्वितीय संस्करण)	२०५७-२०००
३. शतहस्त समाहार सहस्र हस्त संकिर	२०६०-२००४
४. वानप्रस्थ श्री सत्यनारायण आर्य (आर्य जगत् की दिव्य विभूति)	२०६४-२००७
५. विश्व कल्याण दिव्य भजनमाला (२००० पृष्ठ)	२०६५-२००९

आपकी पुण्य स्मृति में वानप्रस्थ सत्यनारायण आर्य द्वारा प्रकाशित साहित्य–

१. गृहोद्यान के दो माली	२०६६-२००९
२. आर्यों के नित्यकर्म	२०६६-२०१०
३. मानवता पर कलंक भ्रूणहत्या	२०६८-२०१०
४. निर्धनों के लिए ४०० फ्लैटों का प्रोजेक्ट	२०६८-२०१०

वानप्रस्था गुलाबी देवी आर्या दिव्य स्मृति ग्रन्थमाला :-

(विभिन्न विषयों पर आर्य जगत् के विद्वानों द्वारा ट्रेक्ट लेखन २०६८-२०११)

१. ईश्वर-जीव-प्रकृति	आचार्य ज्ञानेश्वर आर्य
२. गुलदस्ता	दोमादर लाल मूंधड़ा
३. जीवन का अन्तिम लक्ष्य–मोक्ष	स्वामी ऋतस्पति परिव्राजक
४. ईश्वर और जीव	डॉ. सुदर्शन देव आचार्य
५. प्रकृति	आचार्य दिलीप कुमार जिज्ञासु
६. वेद पढ़ें - आगे बढ़ें	डॉ. कमलनारायण वेदाचार्य
७. स्तुति प्रार्थना व उपासना का यथार्थ स्वरूप	स्वामी अमृतानन्द सरस्वती
८. आधुनिक भारत की सच्ची सन्त	आचार्य सुखदेव 'आर्य तपस्वी'
९. सुख-शान्ति के उपाय	स्वामी शान्तानन्द सरस्वती
१०. वैदिक सूक्त	आचार्य राहुलदेव शास्त्री
११. भागवत् कथा	आचार्य सोमदेव शास्त्री
१२. फूलझड़ियाँ	वानप्रस्थ सत्यनारायण आर्य

आपकी पुण्य स्मृति में प्रकाशित होने वाला साहित्य–

(क) वानप्रस्था गुलाबी देवी आर्या दिव्य स्मृति ग्रन्थमाला में अन्य कई ट्रेक्ट

(ख) भारत की सच्ची सन्त आदर्श नारी वानप्रस्था गुलाबी देवीजी की जीवन-यात्रा